रजिस्टर्ड नं० ए० डी०-4

सरकारी गजट, उत्तर प्रदेश

उत्तर प्रदेशीय सरकार द्वारा प्रकाशित

असाधारण

लखनऊ, शनिवार, 1 मई, 1976
बैशाख 11, 1898 शक् सम्वत्

उत्तर प्रदेश सरकार

विधायिका अनुभाग-1

संख्या 1738/17-वि0-1--156-75

लखनऊ, 1 मई, 1976

अधिसूचना

विविध

"भारत का संविधान" के अनुच्छेद 201 के अधीन राष्ट्रपति महोदय ने उत्तर प्रदेश विधान मंडल द्वारा पारित उत्तर प्रदेश लोक सेवा (अधिकरण) विधेयक, 1976 पर दिनांक 30 अप्रैल, 1976 ई० को अनुमति प्रदान की और वह उत्तर प्रदेश अधिनियम संख्या 17, 1976 के रूप में सर्वसाधारण की सूचनार्थ इस अधिसूचना द्वारा प्रकाशित किया जाता है ।

उत्तर प्रदेश लोक सेवा (अधिकरण) अधिनियम, 1976

(उत्तर प्रदेश अधिनियम संख्या 17, 1976)

(जैसा उत्तर प्रदेश विधान मण्डल द्वारा पारित हुआ ।)

राज्य के समस्त लोक सेवकों के सेवायोजन से सम्बद्ध विषयों के संबंध में विवादों के न्याय निर्णयन के निमित्त अधिकरणों के गठन की व्यवस्था करने के लिए

अधिनियम

भारत गणराज्य के सत्ताइसवें वर्ष में निम्नलिखित अधिनियम बनाया जाता है:--

संक्षिप्त नाम, विस्तार, प्रारम्भ और लागू होना

1--(1) यह अधिनियम उत्तर प्रदेश लोक सेवा (अधिकरण) अधिनियम, 1976 कहा जायेगा ।

(2) इसका विस्तार सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश में होगा ।

(3) यह 24 नवम्बर, 1975 से प्रवृत्त समझा जायगा ।

(4) यह धारा और धारा 2 और 6 सभी लोक सेवकों के सम्बन्ध में लागू होंगी जबकि शेष उपबन्ध लोक सेवकों के निम्नलिखित वर्गों पर लागू न होंगे, अर्थात्--

(क) न्यायिक सेवा के सदस्य;

(ख) उच्च न्यायालय के अधिकारी या सेवक;

(ग) राज्य विधान मण्डल के किसी सदन के सचिवालय कर्मचारिवर्ग के सदस्य;

(घ) राज्य लोक सेवा आयोग के कर्मचारिवर्ग के सदस्य;

(ङ) औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 या संयुक्त प्रान्त औद्योगिक झगड़ों का ऐक्ट, सन् 1947 ई० में परिभाषित कर्मकार (वर्कमैन)।

परिभाषाएं

2— इस अधिनियम में—

(क) "नियत दिनांक" का तात्पर्य 24 नवम्बर, 1975 से है;

(ख) "लोक सेवक" का तात्पर्य प्रत्येक ऐसे व्यक्ति से है, जो—

(1) राज्य सरकार का सेवक या वेतन भोगी हो या राज्य सरकार से किसी लोक कर्तव्य के प्रयोजनार्थ फीस या कमीशन के रूप में पारिश्रमिक पाता हो; या

(2) किसी स्थानीय प्राधिकारी का या राज्य सरकार के (जिसमें विश्वविद्यालय सम्मिलित नहीं है) स्वामित्व या नियंत्रण के किसी निगम (जो कम्पनी अधिनियम, 1956 की धारा 3 में यथा परिभाषित कम्पनी या कोई स्थानीय प्राधिकारी न हो) का, या (कम्पनी अधिनियम, 1956 की धारा 3 में यथा परिभाषित) किसी कम्पनी का, जिसमें समादत्त अंश पूंजी का 50 प्रतिशत से अन्यून राज्य सरकार द्वारा धारित है, सेवक या वेतन भोगी हो;

(ग) "अधिकरण" का तात्पर्य धारा 3 के अधीन गठित किसी राज्य लोक सेवा अधिकरण से है।

अधिकरण का गठन

3—(1) राज्य सरकार, अधिसूचना द्वारा दो या अधिक अधिकरण गठित कर सकती है जिनमें से प्रत्येक राज्य लोक सेवा अधिकरण कहलायेगा।

(2) प्रत्येक अधिकरण में एक न्यायिक सदस्य और एक प्रशासकीय सदस्य होगा।

(3) न्यायिक सदस्य ऐसा व्यक्ति हो जो उच्च न्यायालय का न्यायाधीश है या रह चुका है या होने के लिए अर्ह है, और प्रशासकीय सदस्य ऐसा व्यक्ति होगा जो किसी मण्डल के आयुक्त के पद, या उसके समकक्ष किसी पद, पर आसीन हो या रह चुका हो।

(4) सदस्यों में से एक को राज्य सरकार अधिकरण के अध्यक्ष के पद पर नामांकित करेगी :

परन्तु यदि न्यायिक सदस्य ऐसा व्यक्ति है जो उच्च न्यायालय का न्यायाधीश है या रह चुका है, तो वह ही अध्यक्ष होगा।

(5) कोई व्यक्ति अधिकरण के सदस्य के रूप में न तो नियुक्त किया जायगा और न पद पर बना रहेगा यदि उसने उच्च न्यायालय के सेवानिवृत्त न्यायाधीश की स्थिति में पैंसठ वर्ष की आयु प्राप्त कर ली हो और किसी अन्य स्थिति में इकसठ वर्ष की आयु प्राप्त कर ली हो।

(6) राज्य सरकार किसी मामले को एक अधिकरण से दूसरे को अन्तरित कर सकती है, और यदि किसी मामले में अधिकरण के दोनों सदस्यों में सहमति न हो तो राज्य सरकार उस मामले को किसी दूसरे अधिकरण को अन्तरित करेगी।

(7) राज्य सरकार, सामान्य या विशेष आदेश द्वारा, क्षेत्र का निर्देश या मामलों के वर्गों का निर्देश करते हुए प्रत्येक अधिकरण की अधिकारिता, समय-समय पर निर्धारित कर सकती है, किन्तु किसी ऐसे आदेश से उपधारा (6) के अधीन राज्य सरकार की शक्ति पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा।

अधिकरण को दावा निर्दिष्ट करना

4—यदि कोई व्यक्ति जो लोक सेवक है या रहा है, यह दावा करता है कि लोक सेवक के रूप में सेवायोजन से सम्बन्धित किसी मामले में उसके सेवायोजक ने या सेवायोजक के अधीनस्थ किसी अधिकारी या प्राधिकारी ने उसके साथ इस प्रकार व्यवहार किया है जो किसी करार के, या

(क) किसी सरकारी सेवक की स्थिति में, संविधान के अनुच्छेद 16 या अनुच्छेद 311 के उपबन्धों के या संविधान के अनुच्छेद 309 या अनुच्छेद 313 के अधीन प्रभावी किसी नियम या विधि के,

(ख) किसी स्थानीय प्राधिकारी या संविधिक निगम के सेवक की स्थिति में, संविधान के अनुच्छेद 16 के या ऐसे प्राधिकारी या निगम को गठित करने वाले विधान मण्डल के किसी अधिनियम के अधीन प्रभावी किसी नियम या विनियम के,

अनुरूप नहीं है, तो वह उस दावे का निर्देश अधिकरण को करेगा, और उस पर अधिकरण का विनिश्चय संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 के उपबन्धों के अधीन रहते हुये, अन्तिम होगा :

परन्तु अधिकरण सामान्यतया कोई निर्देश ग्रहण नहीं करेगा जब तक कि दावेदार अपने ऊपर लागू नियमों के अधीन सभी विभागीय उपचारों का आश्रय न ले चुका हो।

स्पष्टीकरण:—इस परन्तुक के प्रयोजनार्थ दावेदार से (किसी सरकारी सेवक की स्थिति में) यह अपेक्षा करना आवश्यक न होगा कि वह अधिकरण को अपना दावा निर्देशित करने के पूर्व राज्यपाल को मेमोरियल देने के उपचार का आश्रय भी ले।

अधिनियम संख्या 5, 1908
अधिनियम संख्या 1, 1872
अधिनियम संख्या 36, 1963

अधिकरण की शक्ति और प्रक्रिया

5--(1)(क) अधिकरण सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 में निर्धारित प्रक्रिया या भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 में दिये गये साक्ष्य नियमों से बाध्य नहीं होगा, किन्तु नैसर्गिक न्याय के सिद्धान्तों द्वारा मार्गदर्शित होगा, और इस धारा के उपबन्धों और धारा 7 के अधीन बनाये गये किन्हीं नियमों के उपबन्धों के अधीन रहते हुए, अधिकरण को अपनी प्रक्रिया (जिसमें अपनी बैठक का स्थान और समय नियत करना और यह विनिश्चित करना भी सम्मिलित है कि बैठक सार्वजनिक या असार्वजनिक तौर पर की जाय) विनियमित करने की शक्ति होगी।

(ख) धारा 4 के अधीन सभी निर्देशों पर परिसीमा अधिनियम, 1963 के उपबन्ध लागू होंगे, मानो निर्देश सिविल न्यायालय में दाखिल किया गया कोई वाद या आवेदन हो :

परन्तु यदि उच्च न्यायालय के अधीनस्थ किसी न्यायालय ने धारा 4 में उल्लिखित किसी विषय के सम्बन्ध में नियत दिनांक से पूर्व डिक्री पारित किया हो या किसी वाद या अपील की परवी के अभाव में खारिज करने का आदेश पारित किया हो, और वह डिक्री या आदेश अन्तिम न हुआ हो तो ऐसे न्यायालय के विनिश्चय से व्यथित कोई लोक सेवक या उसका सेवायोजक नियत दिनांक से साठ दिन के भीतर अधिकरण को निर्देश कर सकता है, और अधिकरण ऐसी डिक्री का पुष्टीकरण, परिष्कार या अपाकरण कर सकता है (किन्तु मामला किसी ऐसे न्यायालय को प्रतिप्रेषित नहीं कर सकता), और अधिकरण का ऐसा विनिश्चय अन्तिम होगा।

(2) अधिकरण प्रत्येक निर्देश को यथाशीघ्र विनिश्चित करेगा और साधारणतया प्रत्येक मामला दस्तावेजों और अभ्यावेदनों के परिशीलन और मौखिक बहस, यदि कोई हो, के आधार पर विनिश्चित किया जायगा।

(3) अधिकरण साक्ष्य में, किसी मूल दस्तावेज के बदले, किसी राजपत्रित अधिकारी या नोटरी द्वारा प्रमाणित उसकी प्रतिलिपि ग्रहण कर सकता है।

(4) अधिकरण साधारणतया मौखिक साक्ष्य पेश करने को न कहेगा और न अनुज्ञा देगा, और यदि आवश्यक हो, किसी पक्षकार से शपथ-पत्र दाखिल करने को अपेक्षा कर सकता है।

अधिनियम संख्या 5, 1908

(5) अधिकरण को इस अधिनियम के अधीन कोई जांच करने के प्रयोजनार्थ उपधारा (1) के उपबन्धों के अधीन रहते हुए, निम्नलिखित बातों के संबंध में वही शक्तियां होंगी जो किसी वाद पर विचार करते समय सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के अधीन किसी सिविल न्यायालय में निहित हैं :--

(क) किसी व्यक्ति को समन करना और उसे उपस्थित होने के लिए बाध्य करना और शपथ पर उसकी परीक्षा करना;

(ख) दस्तावेजों को प्रकट और प्रस्तुत करने की अपेक्षा करना;

(ग) शपथ-पत्रों पर साक्ष्य प्राप्त करना;

अधिनियम संख्या 1, 1872

(घ) भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 123 और 124 के उपबन्धों के अधीन रहते हुए, किसी कार्यालय से किसी लोक अभिलेख या उसकी प्रतिलिपि की अभियाचना करना;

(ङ) साक्षियों या दस्तावेजों की परीक्षा के लिए कमीशन जारी करना;

(च) विधिपूर्ण करार, समझौता या तुष्टि को अभिलिखित करना और तदनुसार आदेश देना;

(छ) अपने विनिश्चय का पुनर्विलोकन करना;

(ज) व्यतिक्रम के लिए कोई निर्देश खारिज करना या उस पर एक-पक्षीय विनिश्चय देना;

(झ) व्यतिक्रम के लिए खारिज किये गये किसी आदेश या अपने द्वारा दिये गये एक-पक्षीय आदेश को अपास्त करना;

(ञ) किसी निर्देश पर अन्तिम विनिश्चय होने तक, ऐसी शर्तों पर, यदि कोई हों, जिन्हें आरोपित करना वह उचित समझे, अन्तर्वर्ती आदेश देना;

(ट) कोई अन्य विषय जो विहित किया जाय।

(6) अधिकरण द्वारा की गई कोई घोषणा दावेदार और उसके सेवायोजक पर और किसी ऐसे अन्य लोक सेवक पर बन्धनकारी होगी जिस दावा के संबंध में जिससे उसके हित पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता हो, उसके विरुद्ध अभ्यावेदन देने का अवसर दिया गया हो, और उसका किसी विधि न्यायालय द्वारा की गई घोषणा के समान प्रभाव होगा।

(7) यदि अधिकरण दावेदार के पक्ष में और उसके सेवायोजक या किसी अन्य लोक सेवक के विरुद्ध कोई अन्य आदेश दें, और ऐसे आदेश का अनुपालन तीन मास की अवधि में न किया जाय तो, उसके आवेदन पर अधिकरण अपने द्वारा निर्णीत राशि की वसूली के लिए या अनुदत्त अन्य अनुतोष के लिए प्रमाण-पत्र जारी कर सकता है, और जिस व्यक्ति के पक्ष में ऐसा प्रमाण-पत्र जारी किया जाय वह अधिकरण के आदेश का निष्पादन करने के लिए, उत्तर प्रदेश में स्थित मूल अधिकारिता वाले प्रधान सिविल न्यायालय को जिसकी अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के भीतर वह ऐसे सेवायोजक के पास तत्समय कार्य कर रहा हो या अन्तिम बार कार्य किया हो, आवेदन कर सकता है, और ऐसा न्यायालय तदुपरान्त प्रमाण-पत्र का उसी रीति से और उसी प्रक्रिया के अनुसार निष्पादन करेगा या करायेगा मानों वह किसी वाद में उसके द्वारा समान अनुतोष के लिए दी गई डिक्री हो।

(8) (क) सेवायोजक अधिकरण के समक्ष अपना मामला प्रस्तुत करने के लिए कोई लोक सेवक या विधि व्यवसायी नियुक्त कर सकता है जो प्रस्तुतकर्ता अधिकारी कहलायेगा।

(ख) लोक सेवक अपनी ओर से अधिकरण के समक्ष अपना मामला प्रस्तुत करने के लिए किसी अन्य लोक सेवक की सहायता ले सकता है, किन्तु इस प्रयोजनार्थ कोई विधि व्यवसायी केवल उस दशा में रख सकेगा जब कि या तो (1) सेवायोजक द्वारा नियुक्त प्रस्तुतकर्ता अधिकारी कोई विधि व्यवसायी हो, या (2) अधिकरण, मामले की परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, ऐसी अनुज्ञा दे।

(9) अधिकरण के समक्ष किसी कार्यवाही को भारतीय दण्ड संहिता की धारा 193 और 228 के अर्थान्तर्गत न्यायिक कार्यवाही समझा जाएगा। अधिनियम संख्या 45 1860

(10) किसी निर्देश पर या किसी निर्देश के उत्तर पर या किसी आवेदन-पत्र पर या तो नियुक्ति प्राधिकारी या प्रस्तुतकर्ता अधिकारी या जहां नियुक्ति अधिकारी राज्यपाल हों वहां राज्य सरकार द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत उप सचिव से अनिम्न पद के किसी अधिकारी द्वारा और किसी स्थानीय प्राधिकारी, निगम या कम्पनी की स्थिति में, उसके मुख्य कार्यपालक अधिकारी या सचिव द्वारा, यथास्थिति, हस्ताक्षर किया जा सकता है।

वाद पर रोक

6--(1) किसी व्यक्ति के, जिसके अन्तर्गत धारा 1 की उपधारा (4) के खण्ड (क) से (ङ) में विनिर्दिष्ट वर्गों के व्यक्ति भी हैं, अनुरोध पर जो लोक सेवक है या रह चुका है, सेवायोजन से सम्बन्धित किसी बात के सम्बन्ध में किसी अनुतोष के लिये कोई वाद राज्य सरकार या किसी स्थानीय प्राधिकारी या किसी संविधिक निगम या कम्पनी के विरुद्ध ग्राह्य नहीं होगा।

(2) नियत दिनांक से ठीक पूर्ववर्ती दिनांक को उच्च न्यायालय के अधीनस्थ किसी न्यायालय के समक्ष विचाराधीन समान अनुतोष के लिए सभी वाद, और ऐसे वादों से प्रोद्भूत होने वाली सभी अपील, पुनरीक्षण, पुनर्विलोकन के लिये आवेदन-पत्र और अन्य अनुषंगी या सहायक कार्यवाहियां (जिसके अन्तर्गत सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की प्रथम अनुसूची के आदेश 39 क अधीन सभी कार्यवाहियां भी हैं), और अकिंचन के रूप में समान अनुतोष के लिए वाद या अपील प्रस्तुत करने की अनुज्ञा के लिए सभी आवेदन-पत्र और उच्च न्यायालय के समक्ष विचाराधीन अन्तर्वर्ती आवेदनों से प्रोद्भूत होने वाले सभी पुनरीक्षण उपशमित हो जायेंगे, और उनके अभिलेख ऐसे अधिकरण को अन्तरित कर दिये जायेंगे, जिसे राज्य सरकार विनिर्दिष्ट करे, और तदुपरान्त अधिकरण उन मामलों पर उसी रीति से विनिश्चय देगा मानों वे धारा 4 के अधीन उसे निर्दिष्ट दावे हों : अधिनियम संख्या 5 1908

परन्तु अधिकरण, धारा 5 के उपबन्धों के अधीन रहते हुए, उसी प्रक्रम से कार्यवाही फिर से प्रारम्भ करेगा, जिस पर मामला उपर्युक्त प्रकार से उपशमित किया गया था और न्यायालय में प्रस्तुत अभिवचन या पेश किए गए किसी मौखिक या दस्तावेजी साक्ष्य पर कार्यवाही करेगा मानों वह अधिकरण के समक्ष प्रस्तुत या पेश किए गए थे।

(3) नियत दिनांक के ठीक पूर्ववर्ती दिनांक को उच्च न्यायालय के समक्ष ऐसे वादों से प्रोद्भूत होने वाली विचाराधीन सभी अपीलों की सुनवाई और निस्तारण उस न्यायालय द्वारा पूर्ववत् किया जायगा मानों यह अधिनियम प्रवृत्त न हुआ हो :

परन्तु यदि उच्च न्यायालय सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की प्रथम अनुसूची के आदेश 41 के नियम 23 या नियम 25 के अधीन मामला प्रतिप्रेषित या प्रतिनिर्देशित करना आवश्यक समझे तो प्रतिप्रेषण या निर्देश का आदेश सम्बद्ध अधीनस्थ न्यायालय के बजाय ऐसे अधिकरण को सम्बोधित होगा जिसे राज्य सरकार विनिर्दिष्ट करे और तदुपरान्त अधिकरण, उच्च न्यायालय के निदेश के अधीन रहते हुए, मामला या विवाद पर उसी प्रकार विनिश्चय देगा मानों वह धारा 4 के अधीन उसे निर्दिष्ट कोई दावा हो। अधिनियम संख्या 5, 1908

नियम बनाने की शक्ति

7--(1) राज्य सरकार, इस अधिनियम के प्रयोजनों को कार्यान्वित करने के लिए अधिसूचना द्वारा नियम बना सकती है।

(2) विशिष्टतः, और पूर्वगामी शक्ति की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, इन नियमों में निम्नलिखित सभी या किसी विषय की व्यवस्था की जा सकती है, अर्थात् :—

(क) अधिकरण की शक्ति और प्रक्रिया;

(ख) विभिन्न अधिकरणों में कार्य-विभाजन;

(ग) किसी अधिकरण के समक्ष कार्यवाहियों के सम्बन्ध में दी जाने वाली फीस, और उसका भुगतान करने की रीति;

(घ) कोई अन्य विषय जिसके लिए इस अधिनियम में अपर्याप्त उपबन्ध हो और राज्य सरकार उस निमित्त उपबन्ध बनाना आवश्यक या समीचीन समझे।

निरसन, अपवाद और संक्रमण-कालीन उपबन्ध

8—(1) उत्तर प्रदेश लोक सेवा (अधिकरण) अध्यादेश, 1976 एतद्द्वारा निरसित किया जाता है।

(2) ऐसे निरसन या उपधारा (1) में उल्लिखित अध्यादेश द्वारा उत्तर प्रदेश लोक सेवा (अधिकरण) अध्यादेश, 1975 के निरसन के होते हुए भी, उक्त अध्यादेशों के अधीन किया गया कोई कार्य या की गयी कोई कार्यवाही इस अधिनियम के अधीन किया गया कार्य या की गयी कार्यवाही समझी जायगी मानों यह अधिनियम सभी सारभूत समय पर प्रवृत्त था।

(3) इस अधिनियम की धारा 5 की उपधारा (1) के खण्ड (ख) के परन्तुक में उल्लिखित आदेश और इस अधिनियम की धारा 6 की उपधारा (2) में निर्दिष्ट आवेदन-पत्रों के सम्बन्ध में, जो 1975 के उक्त अध्यादेश के तत्समान उपबन्धों में उल्लिखित न थे, नियत दिनांक के प्रति निर्देश का अर्थ 16 फरवरी, 1976 के प्रति निर्देश से लगाया जायगा।

No. 1738/XVII-V-1—156-75

In pursuance of the provisions of clause (3) of Article 348 of the Constitution of India, the Governor is pleased to order the publication of the following English translation of the Uttar Pradesh Lok Seva (Adhikaran) Adhiniyam, 1976 (Uttar Pradesh Adhiniyam Sankhya 17 of 1976) as passed by the Uttar Pradesh Legislature and assented to by the President on April 30, 1976:

THE UTTAR PRADESH PUBLIC SERVICES (TRIBUNALS) ACT, 1976

[U. P. Act no. 17 of 1976]

(As passed by the Uttar Pradesh Legislature)

AN

ACT

to provide for the constitution of tribunals to adjudicate disputes in respect of matters relating to employment of all public servants of the State.

It is hereby enacted in the Twenty-seventh Year of the Republic of India as follows :—

Short title, extent, commencement and application.

1. (1) This Act may be called the Uttar Pradesh Public Services (Tribunals) Act, 1976.

(2) It extends to the whole of Uttar Pradesh.

(3) It shall be deemed to have come into force on November 24, 1975.

(4) This section and sections 2 and 6 shall apply in relation to all public servants while the remaining provisions shall not apply to the following classes of public servants, namely:—

(*a*) a member of a judicial service;

(*b*) an officer or servant of the High Court;

(*c*) a member of the secretariat staff of any House of the State Legislature;

(*d*) a member of the staff of the State Public Service Commission;

(*e*) a workman as defined in the Industrial Disputes Act, 1947 or the United Provinces Industrial Disputes Act, 1947.

Act XIV of 1947.

U. P. Act VIII of

Definitions.

2. In this Act—

(*a*) "appointed date", means the twenty-fourth day of November, 1975;

(*b*) "public servant" means every person—

(i) in the service or pay of the State Government, or remunerated by fees or commission for the purpose of any public duty by the State Government; or

(ii) in the service or pay of a local authority, any corporation (not being a company as defined in section 3 of the Companies Act, 1956 or a local authority) owned or controlled by the State Government (not including a University) or any company (as defined in section 3 of the Companies Act, 1956) in which not less than fifty per cent of the paid-up share capital is held by the State Government;

(*c*) "Tribunal" means a State Public Services Tribunal constituted under section 3.

Constitution of the Tribunal.

3. (1) The State Government may by notification constitute two or more Tribunals, each to be called a State Public Services Tribunal.

(2) Each Tribunal shall consist of a Judicial Member and an Administrative Member.

(3) The Judicial Member shall be a person who is or has been or is qualified to be a Judge of a High Court, and an Administrative Member shall be a person who holds or has held the post of, or any post equivalent to, Commissioner of a Division.

(4) One of the members shall be designated by the State Government to be the Chairman of the Tribunal:

Provided that where the Judicial Member is a person who is or has been a Judge of a High Court, he shall be the Chairman.

(5) No person shall be appointed or continue to hold office as a member of a Tribunal if in the case of a retired High Court Judge he has attained the age of sixty-five years and in any other case he has attained the age of sixty-one years.

(6) The State Government may transfer any case from one Tribunal to another, and if in any case the two members of a Tribunal are unable to agree, the State Government shall transfer that case to another Tribunal.

(7) The State Government may, by general or special order, from time to time, define the jurisdiction of each Tribunal either with reference to territories or with reference to classes of cases, but any such order shall be without prejudice to the power of the State Government under sub-section (6).

Reference of claims to Tribunal.

4. If any person who is or has been a public servant claims that in any matter relating to employment as such public servant his employer or any officer or authority subordinate to the employer has dealt with him in a manner which is not in conformity with any contract, or—

(*a*) in the case of a Government servant, with the provisions of Article 16 or Article 311 of the Constitution or with any rules or law having force under Article 309 or Article 313 of the Constitution;

(*b*) in the case of a servant of a local authority or a statutory corporation, with Article 16 of the Constitution or with any rules or regulations having force under any Act of Legislature constituting such authority or corporation;

he shall refer such claim to the Tribunal, and the decision of the Tribunal thereon shall, subject to the provisions of Articles 226 and 227 of the Constitution, be final:

Provided that no reference shall ordinarily be entertained by the Tribunal until the claimant has exhausted his departmental remedies under the rules applicable to him.

Explanation—For the purposes of this proviso, it shall not be necessary to require the claimant (in the case of a Government servant) to avail also of the remedy of memorial to the Governor before referring his claim to the Tribunal.

Powers and procedure of the Tribunal.

5. (1) (*a*) The Tribunal shall not be bound by the procedure laid down in the Code of Civil Procedure, 1908, or the rules of evidence contained in the Indian Evidence Act, 1872, but shall be guided by the principles of natural justice, and subject to the provisions of this section and of any rules made under section 7, the Tribunal shall have power to regulate its own procedure (including the fixing of places and times of its sittings and deciding whether to sit in public or in private).

(*b*) The provisions of the Limitation Act, 1963, shall apply to all references under section 4, as if a reference were a suit or application filed in the Civil Court :

Provided that where any court subordinate to the High Court has before the appointed date passed a decree in respect of any matter mentioned in section 4, or passed an order dismissing a suit or appeal for non-prosecution and that decree or order has not become final, any public servant or his employer aggrieved by the decision of such court may make a reference to the Tribunal within 60 days from the appointed date, and the Tribunal may affirm, modify or set aside such decree (but may not remand the case to any such court), and such decision of the Tribunal shall be final.

(2) The Tribunal shall decide every reference expeditiously and ordinarily, every case shall be decided by it on the basis of perusal of documents and representations, and of oral arguments, if any.

(3) The Tribunal may admit in evidence, in lieu of any original document, a copy thereof attested by a gazetted officer or by a notary.

(4) The Tribunal shall not ordinarily call for or allow to be adduced oral evidence, and may, if necessary, require any party to file an affidavit.

(5) The Tribunal shall, for the purpose of holding any inquiry under this Act, have, subject to the provisions of sub-section (1), the same powers as are vested in a Civil Court under the Code of Civil Procedure, 1908, while trying a suit, in respect of the following matters :—

(*a*) summoning and enforcing the attendance of any person and examining him on oath ;

(*b*) requiring the discovery and production of documents ;

(*c*) receiving evidence on affidavits ;

(*d*) subject to the provisions of sections 123 and 124 of the Indian Evidence Act, 1872, requisitioning any public record or copy thereof from any office ;

(*e*) issuing commission for the examination of witnesses or documents ;

(*f*) recording a lawful agreement, compromise or satisfaction and making an order in accordance therewith ;

(*g*) reviewing its decision ;

(*h*) dismissing a reference for default or deciding it *ex parte* ;

(*i*) setting aside an order of dismissal for default or an order passed by it *ex parte* ;

(*j*) passing interlocutory orders pending final decision of any reference on such terms, if any, as it thinks fit to impose ;

(*k*) any other matter which may be prescribed.

(6) A declaration made by the Tribunal shall be binding on the claimant and his employer as well as on any other public servant who has, in respect of any claim affecting his interest adversely, been given an opportunity of making a representation against it, and shall have the same effect as a declaration made by a Court of law.

(7) Where the Tribunal makes any other order in favour of the claimant and against his employer or any other public servant, and such order remains uncomplied with for a period of three months, the Tribunal may, on his application, issue a certificate for recovery of the amount awarded or, as the

case may be, for other relief granted by it, and any person in whose favour such certificate is issued may apply to the principal civil court of original jurisdiction in Uttar Pradesh, within the local limits of whose jurisdiction he has, for the time being, been serving or last served such employer, for execution of the order of the Tribunal, and such court shall thereupon execute the certificate or cause the same to be executed in the same manner and by the same procedure as if it were a decree for like relief made by itself in a suit.

(8) (*a*) The employer may appoint a public servant or a legal practitioner, to be known as the Presenting Officer, to present its case before the Tribunal.

(*b*) The public servant may take the assistance of any other public servant to present his case before the Tribunal on his behalf, but may not engage a legal practitioner for the purpose unless either (i) the Presenting Officer appointed by the employer is a legal practitioner, or (ii) the Tribunal, having regard to the circumstances of the case, so permits.

(9) Any proceeding before the Tribunal shall be deemed to be a judicial proceeding within the meaning of sections 193 and 228 of the Indian Penal Code. Act of 1

(10) A reference or a reply to a reference or an application may be signed either by the appointing authority or by the Presiding Officer or, where the appointing authority is the Governor, by an officer not below the rank of Deputy Secretary authorised by the State Government in this behalf, and in the case of a local authority, corporation or company by the Chief Executive Officer or Secretary thereof, as the case may be.

Bar of suits.

6. (1) No suit shall lie against the State Government or any local authority or any statutory corporation or company for any relief in respect of any matter relating to employment at the instance of any person who is or has been a public servant, including a person specified in clauses (*a*) to (*e*) of sub-section (4) of section 1.

(2) All suits for the like relief, and all appeals, revisions, applications for review and other incidental or ancillary proceedings (including all proceedings under order XXXIX of the First Schedule to the Code of Civil Procedure, 1908), Act 1908. arising out of such suits, and all applications for permission to sue or appeal as pauper for the like relief, pending before any court subordinate to the High Court and all revisions (arising out of interlocutory orders) pending before the High Court on the date immediately preceding the appointed date shall abate, and their records shall be transferred to such Tribunal as the State Government may specify, and thereupon the Tribunal shall decide the cases in the same manner as if they were claims referred to it under section 4 :

Provided that the Tribunal shall, subject to the provisions of section 5, recommence the proceedings from the stage at which the case abated as aforesaid and deal with any pleadings presented or any oral or documentary evidence produced in the court as if the same were presented or produced before the Tribunal.

(3) All appeals pending before the High Court on the date immediately preceding the appointed date arising out of such suits shall continue to be heard and disposed of by that court as heretofore as if this Act had not come into force :

Provided that if the High Court considers it necessary to remand or refer back the case under rule 23 or rule 25 of order 41 of the First Schedule to the Code of Civil Procedure, 1908, the order of remand or reference shall be directed to such Tribunal as the State Government may specify instead of to the subordinate court concerned and the Tribunal shall thereupon decide the case or issue, subject to the directions of the High Court, in the same manner as if it were a claim referred to it under section 4. Act 1908.

Power to make rules.

7. (1) The State Government may by notification make rules for carrying out the purposes of this Act.

(2) In particular, and without prejudice to the generality of the foregoing power, such rules may provide for all or any of the following matters, namely :—

(*a*) the powers and procedure of the Tribunals ;

(*b*) the distribution of business between different Tribunals ;

(*c*) the fees to be paid in respect of proceedings before a Tribunal, and the manner of payment thereof ;

(*d*) any other matter for which insufficient provision exists in this Act and the State Government considers provision in that behalf necessary or expedient.

U.P. Ordinance no.8 of 1976.

8. (1) The Uttar Pradesh Public Services (Tribunals) Ordinance, 1976 is hereby repealed.

Repeal, savings and transitory provision.

(2) Notwithstanding such repeal or the repeal of the Uttar Pradesh Public Services (Tribunals) Ordinance, 1975 by the Ordinance mentioned in sub-section (1) anything done or any action taken under the said Ordinances shall be deemed to have been done or taken under this Act as if this Act was in force at all material times.

(3) In relation to orders mentioned in the proviso to clause (*b*) of sub-section (1) of section 5 of this Act and applications referred to in sub-section (2) of section 6 of this Act which were not mentioned in the corresponding provisions of the said Ordinance of 1975, the references to the appointed date shall be construed as references to February 16, 1976.

आज्ञा से,

कैलाश नाथ गोयल,

सचिव ।

पी० एस० यू० पी०—ए० पी० 49 सा० (विधा०)—1976—750 (मेक०)